इस प्रकार यह न तो ऐसा मामला है जिसमें संशोधन की मांग की गई थी कि बिक्री में शामिल संपत्ति के विवरण को हटा दिया जाए या पहले से ही प्रतिवादी के रूप में मुकदमा किए गए पक्ष के नाम के गलत विवरण को स्पष्ट किया जाए।छूट दिए गए प्रतिअभियोक्ता का विवरण आसानी से एकत्र किया जा सकता था, यदि बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति को अभियोक्ता को भगाने के लिए उचित सावधानी और ध्यान के साथ पढ़ा गया था, तो इसे उप-पंजीयक के कार्यालय से ठीक किया जा सकता था, **वाद भूमि पर कब्जा** या स्वामित्व, या दोनों के संबंध में राजस्व रिकॉर्ड से विक्रेताओं के नामों को सत्यापित किया जा सकता था।

(7) उपरोक्त चर्चा के क्रम के रूप में, हम याचिका में कोई योग्यता नहीं पाते हैं।निचली अदालत का आदेश **अप्राप्य** है। इस प्रकार यह याचिका विफल हो जाती है और **इसे खारिज किया जाता है**। कोई लागत नहीं।

एन के एस।

आई. एस. तिवाना, **न्यायमूर्ति के सम्मुख**

यू. टी. चंडीगढ़,-अपीलार्थी

बनाम

बचना और अन्य, प्रतिवादि

1980 की नियमित प्रथम अपील सं. 154।

8 दिसंबर, 1980।

सिविल प्रक्रिया संहिता *(1908 का 5)*-आदेश 41 नियम 22-एक याचिका के साथ एक फ़र्ज़ी तिथि के लिए **प्रतिवादि को** नोटिस-ऐसी सूचना-चाहे 'अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन' के लिए-प्रति-आपत्ति दायर करने के लिए सीमा की अवधि-क्या ऐसी सूचना प्राप्त होने पर चलने लगती है।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 के आदेश 41 नियम 22 को **सरसरी नजर से** पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह केवल एक प्रतिवादी के खिलाफ दायर अपील की सुनवाई की तारीख तय करने वाले नोटिस की प्राप्ति या सेवा पर है कि प्रति-आपत्ति दायर करने के लिए उसके खिलाफ 30 दिनों की सीमा की अवधि शुरू हो जाती है।नियम 22 अपील में प्रतिवादी को दो अलग-अलग अधिकार देता है-पहला उन किसी भी आधार पर प्रथम दृष्टांत के न्यायालय की डिक्री को बरकरार रखने का अधिकार है जिस पर उस न्यायालय ने उसके खिलाफ फैसला सुनाया था:और दूसरा अधिकार उस डिक्री पर कोई भी प्रति-आपत्ति लेने का है जिसे प्रतिवादी ने अपील के माध्यम से लिया होगा।पहले मामले में, प्रतिवादी डिक्री का समर्थन करता है और दूसरे में वह उस पर हमला करता है।क्रॉस-ऑब्जेक्शन दाखिल करने का चरण केवल तभी उत्पन्न होता है जब अपील **दाखिल** की जाती है

स्वीकार किया जाता है और अदालत प्रतिवादी को अपनी सुनवाई का नोटिस जारी करने का निर्देश देती है।आदेश 41 के नियम 14 और 15 इस तरह की सूचना की सामग्री और सेवा के तरीके से संबंधित हैं।वास्तव में, इस तरह की सूचना का प्रपत्र संहिता के परिशिष्ट 'जी' में प्रपत्र संख्या 6 के रूप में निर्धारित किया गया है, जहां आक्षेपकर्ता (अपील में प्रतिवादी) को ऐसा कोई नोटिस देने के बजाय, जो विशेष रूप से जारी किया गया है, उसमें कहा गया है कि निर्धारित तिथि केवल एक फरजी तिथि थी, यह स्पष्ट है कि यह नियम 22 के संदर्भ में अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि की सूचना होने के बजाय, उसने स्पष्ट रूप से आक्षेपकर्ता के ध्यान में लाया कि अपील की ऐसी कोई सुनवाई शामिल नहीं थी और निर्धारित तिथि केवल एक फरजी तिथि थी, यानी मामले को पूरा करने के लिए।इसलिए, ऐसी सूचना "अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन" के लिए सूचना नहीं है और इस तरह की सूचना प्राप्त होने पर प्रति-आपत्ति दायर करने की सीमा की अवधि शुरू नहीं होती है।(पैरा 3 और 4)।

श्री अमृत लाल बहरी, जिला न्यायाधीश, चंडीगढ़, दिनांक *11* सितंबर, *1979* के न्यायालय के आदेश से नियमित पहली अपील, जिसमें मुआवजे में *36* लाख रुपये की दर से वृद्धि की गई थी। अधिनियम की खंड *23 (2)* के तहत मुआवजे के रूप में मुआवजे का *15* प्रतिशत और कब्जा लेने की तारीख से भुगतान तक बढ़े हुए मुआवजे पर *6* प्रतिशत ब्याज का हकदार है।दावेदार संदर्भ की लागत के भी हकदार होंगे।

दावा:भूमि अधिग्रहण अधिनियम की खंड 18 के तहत संदर्भ। *1980* प्रति-आपत्ति सं. 162 सी. आई. **साल** 1980

सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 **नियम**, *22* के तहत क्रॉस-ऑब्जेक्शन में अनुरोध किया गया है कि यह माननीय न्यायालय कृपया इस भूमि का बाजार मूल्य एक लाख एकड़ की दर से तय करें और लागत के साथ **क्रोस-एतराज को मंजुर किया जाये।**

सी. एम. सं. 1529-C.I **साल** 1980

सिविल प्रक्रिया संहिता की खंड *151* के तहत आवेदन में प्रार्थना की गई है कि प्रति-आपत्तियों पर विचार किया जाए और अपील के साथ सुनवाई की जाए।

आर. के. छिब्बर, अधिवक्ता, अपीलकर्ता की ओर से।

प्रतिवादी संख्या 1 और *3* के लिए ए. एस. चहल, अधिवक्ता

प्रतिवादी संख्या 2 और *4* की ओर से अधिवक्ता सुनील पार्टी।

फैसला

1. एस. तिवाना, **न्यायमूर्ति**′

(1) इस मामले में विचार के लिए छोटा लेकिन महत्वपूर्ण सवाल उठता है, वह यह है कि आदेश 41, नियम 22 **सिविल प्रक्रिया संहिता** के तहत दो विरोधियों, भाग सिंह और बचना द्वारा दायर क्रॉस आपत्तियों के लिए कैसे।

22, भारत की सिविल प्रक्रिया संहिता (संघ द्वारा दायर 1980 की आर. एफ. ए. सं. 154 फाइल में; इन दो विरोधियों और उनके भाइयों के खिलाफ) सीमा के भीतर हैं।इस विवाद की ओर ले जाने वाले तथ्य इस प्रकार हैं:—

(2) ग्राम अलावा में स्थित आपत्तिकर्ताओं और उनके सह–सांझेदारों और भाईयों नामित बचना और हरबन्स की भूमि को चंडीगढ़ केन्द्र शासीत प्रदेश प्रशासन द्वारा विकास के लिए विभिन्न भूस्वामियों को कुछ अन्य भूमि के साथ शहर में सैक्टर 43 के विकास के लिए अधिग्रहित किया गया था। भूमि अधिग्रहण अधिनियम (संक्षेप में, अधिनियम) की खंड 18 के तहत इन चार भाइयों द्वारा मांगे गए एक संदर्भ पर भूमि अधिग्रहण न्यायालय, चंडीगढ़ ने विवादित निर्णय देते हुए अधिग्रहित भूमि के मुआवजे की दर को बढ़ाकर 36, 000 प्रति एकड़ कर दिया, जबकि उच्चतम दर रु 21,000 प्रति एकड़ भूमि की सर्वोत्तम गुणवत्ता के लिए यानि चाही भूमि अधिग्रहण कलेक्टर द्वारा प्रदान किया गया है। चंडीगढ़ प्रशासन ने इस वृद्धि पर आपत्ति जताई है और उपरोक्त नियमित प्रथम अपील दायर की है।इस अपील को स्वीकार करने पर, इस न्यायालय द्वारा 17 जनवरी, 1980 को चार प्रतिवादी, यानी विरोध करने वालों और उनके भाइयों को एक नोटिस जारी करने का आदेश दिया गया था।इस आदेश के अनुसरण में, इन प्रतिवादी को 20 अगस्त, 1980 को नोटिस जारी किए गए थे, जो 22 सितंबर, 1980 के लिए वापस करने योग्य थे। आरोप है कि इन दोनों विरोधियों को 1 सितंबर, 1980 को नोटिस तामिल हो गये थे, हालांकि वे-सिविल मिस्क के माध्यम से।1980 के सं. 1529-C.I ने सेवा की वास्तविकता और प्रक्रिया सर्वर की रिपोर्ट की शुद्धता पर इस दलील पर विवाद किया है कि वे गाँव अटावा से दूर रह रहे हैं-जिस गाँव में वे कथित रूप से पिछले एक साल से अधिक समय से नोटिस में उल्लिखित पते के अनुसार निवासी हैं और प्रक्रिया सर्वर द्वारा प्राप्त अंगूठे के छापों की शिथिलता के संकेत में कि उसने उन पर नोटिस दिए हैं।इस दावे में एक गहरी जांच और एक गंभीर दृष्टिकोण की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन मुझे लगता है कि उनके विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाए गए कानूनी विवाद को देखते हुए इस मामले में यह अनावश्यक है।

(3)इस अदालत में 12 नवंबर, 1980 को निर्विवाद रूप से एक उच्च मुआवजे का दावा करने वाली क्रॉस-आपत्तियां दायर की गई।इन प्रति-आपत्तियों के बारे में एक नोटिस प्राप्त होने पर, केंद्र शासित प्रदेश प्रशासन के विद्वान अधिवक्ता श्री आर. के. छिब्बर ने प्रारंभिक आपत्ति जताई है कि इन प्रति-आपत्तियों को समय के साथ प्रतिबंधित कर दिया गया है क्योंकि वे इस अपील में सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि के बारे में विरोध करने वालों को नोटिस की सेवा की तारीख से एक महीने के भीतर दायर नहीं किए गए थे।श्री चहल, विरोध करने वालों के विद्वान अधिवक्ता

इस चुनौती को इस निवेदन के साथ पूरा किया जाता है कि भले ही 1 सितंबर, 1980 की सेवा को वास्तविक और अच्छी सेवा के रूप में लिया जाता है, फिर भी "अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित दिन" के बारे में कोई सूचना नहीं होने के कारण, उनके खिलाफ सीमा की अवधि को चलाने का कोई सवाल ही नहीं है।विवाद को हल करने के लिए, मुझे लगता है कि यहां नियम 22, आदेश 41, सिविल प्रक्रिया संहिता के भौतिक भाग को पुनः प्रस्तुत करना आवश्यक है, जो इस प्रकार हैः—

> “कोई भी प्रतिवादी, भले ही उसने डिक्री के किसी भी हिस्से से अपील नहीं की हो, न केवल डिक्री का समर्थन कर सकता है, बल्कि यह भी कह सकता है कि किसी भी मुद्दे के संबंध में नीचे दिए गए न्यायालय में उसके खिलाफ निष्कर्ष उसके पक्ष में होना चाहिए था और उस डिक्री पर कोई भी प्रति-आपत्ति भी ले सकता है जिसे वह अपील के माध्यम से ले सकता था, बशर्ते कि उसने अपील की सुनवाई के लिए उस पर या उसके प्लीडर पर निर्धारित दिन के नोटिस की सेवा की तारीख से एक महीने के भीतर अपील न्यायालय में ऐसी आपत्ति दायर की हो, या ऐसे आगे के समय के भीतर जिसे अपील न्यायालय अनुमति देना उचित समझे।”

(**महत्व** दिया गया)।

उपरोक्त प्रावधान को **सरसरी नजर से यह पर्याप्त से अधिक मात्रा में** यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी प्रतिवादी के खिलाफ दायर अपील की सुनवाई की तारीख तय करने वाले नोटिस की प्राप्ति या सेवा पर ही उसके खिलाफ 30 दिनों की सीमा की अवधि चलने लगती है।मेरे विचार से, ऊपर निर्दिष्ट नियम 22 प्रतिवादी को अपील में दो अलग-अलग अधिकार देता है-पहला उन किसी भी आधार पर प्रथम दृष्टांत के न्यायालय की डिक्री को बरकरार रखने का अधिकार है जिस पर उस न्यायालय ने उसके खिलाफ निर्णय दिया था; और दूसरा अधिकार उस डिक्री पर कोई भी प्रति-आपत्ति लेने का है जिसे प्रतिवादी ने अपील के माध्यम से लिया **होता**। पहले मामले में, प्रतिवादी डिक्री का समर्थन करता है और दूसरे मामले में वह उस पर हमला करता है।प्रति-आपत्तियाँ दायर करने का चरण केवल तभी उत्पन्न होता है जब अपील स्वीकार की जाती है और न्यायालय प्रतिवादी को **इसकी** सुनवाई का नोटिस जारी करने का निर्देश देता है।आदेश 41 के नियम 14 और 15 इस तरह की सूचना की सामग्री और सेवा के तरीके से संबंधित हैं।वास्तव में इस तरह की सूचना का रूप सिविल प्रक्रिया संहिता के परिशिष्ट जी में प्रपत्र संख्या 6 के रूप में निर्धारित किया गया है।आपत्ति करने वालों (आर. एफ. ए. में उत्तरदाताओं) को ऐसा कोई नोटिस देने के बजाय जो नोटिस जारी किया गया है और कथित रूप से उन्हें दिया गया **दिखाया** है, वह विशेष रूप से कहता है कि तय की गई तारीख, यानी।

22 सितंबर, 1980, केवल एक फरज़ी तारीख थी।इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यह नियम 22 के संदर्भ में अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि की सूचना होने के बजाय, इसने स्पष्ट रूप से आपत्तिकर्ताओं के ध्यान में लाया कि अपील की ऐसी कोई सुनवाई शामिल नहीं थी और निर्धारित तिथि केवल एक फरज़ी तिथि थी, यानी मामले को पूरा करने के लिए।

(4) हालांकि श्री छिब्बर, अपीलकर्ता के विद्‌यान वकील का तर्क है कि यदि 1 सितम्बर 1980 को आपत्तिकर्ताओं पर नोटिस की तामिल पर अच्छी सेवा के रूप में लिया जाता है तो कम से कम ये साबित हो जाता है कि अपील की लंबित्ता का ज्ञान प्राप्त करने के लिए आये थे और उनके अनुसार गोटी मकुला चैट्टी वैंकटाराजु बनाम गोटेमकूला रामाभदरीराजु एवम् अन्य (1) लम्भुराम और अन्य बनाम राम प्रताप और अन्य(2) और चिन्म्मा शैटीथी और अन्य बनाम कृष्णैया शैटी एवम् अन्य (3) के निर्णयों के अनुसार इस प्रकार का ज्ञान पर्याप्त अच्छा है कि उनके विरुद्ध सीमा की अवधि चल सकती है। मुझे लगता है कि विद्वान अधिवक्ता की यह प्रस्तुति अच्छी तरह से आधारित नहीं है।सबसे पहले, अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि के बारे में सूचित करने वाले नोटिस की सेवा, मेरे विचार से, तब तक पर्याप्त नहीं है जब तक कि यह भी साबित नहीं हो जाता है कि प्रतिवादी को अपील का ज्ञापन भी दिया गया था और इस प्रकार उसे उसके खिलाफ अपील के दायरे के बारे में जानकारी थी।वास्तव में आदेश 41 के नियम 10 के उप-नियम (3) के प्रावधानों द्वारा दिए जाने वाले नोटिस के साथ इस तरह के अपील का ज्ञापन को अनिवार्य कर दिया गया है।वर्तमान मामले में स्पष्ट रूप से नोटिस के साथ अपील का ज्ञापन भेजने या प्राप्त करने के बारे में न तो कोई रिकॉर्ड है और न ही कोई सबूत है।दूसरा, मैं पाता हूँ कि ऊपर उल्लिखित फैसलों में से कोई भी अपीलकर्ता की मदद नहीं करता है।इनमें से कोई भी आदेश आदेश 41, नियम 22 सी. पी. सी. के संदर्भ में प्रतिवादी को उसके खिलाफ सीमा की अवधि चलाने के लिए जारी किए जाने वाले नोटिस की सामग्री या रूप से संबंधित नहीं है। दूसरी ओर (कांचेरला) पुष्करंबा और एक अन्य बनाम कांचेरला नागरनम्मा (4) में मद्रास उच्च न्यायालय की एकल खण्ड पीठ का निर्णय है, जो कि स्पष्ट रूप से विरोध करने वालों के विद्वान अधिवक्ता के रुख का समर्थन करता है।मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा किए गए आदेश 41-ए, अनुसूची I में संलग्न नोटिस के रूप (6-ए) का संदर्भ देने के बाद, यह देखा गया

(1) ए. आई. आर. 1942 मद्रास 403।
(2) ए. आई. आर. 1944 लाहौर 76 (एफ. बी.)।
(3) ए. आई. आर. 1916 मद्रास 734।
(4) ए. आई. आर. 1926 मद्रास 283.

विद्वान न्यायाधीशों द्वारा कि उस समय उपयोग में आने वाली वास्तविक सूचना को निहितार्थ द्वारा सुनवाई के लिए एक दिन तय करने के रूप में नहीं माना जा सकता है।मुझे लगता है कि उस मामले में तथ्यों और दर्ज किए गए निष्कर्ष का विस्तृत संदर्भ देना सार्थक है।इन्हें निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत किया गया हैः—

> "इस मामले में ओ. 41-ए, एससी में संलग्न प्रपत्र (6-ए) में एक सूचना। 1, उच्च न्यायालय द्वारा बनाई गई सिविल पी. सी. प्रथम प्रतिवादी (प्रथम याचिकाकर्ता) द्वारा 21 दिसंबर, 1923 को और द्वितीय प्रतिवादी (द्वितीय याचिकाकर्ता) द्वारा 5 जनवरी,

1924 को प्राप्त की गई थी।प्रत्यर्थी के वकील का दावा है कि वह समय पर है क्योंकि उसे अभी तक सुनवाई की तारीख तय करने का नोटिस नहीं मिला है और इस तरह का नोटिस मिलने के 30 दिनों के भीतर ही उसे अपनी आपत्तियों का ज्ञापन दाखिल करना था।ओ. 41-ए, और प्रपत्र 6-ए तैयार करने में, उपस्थिति के लिए समय निर्धारित करते हुए, सिविल पी. सी. ओ. 41।ऐसा लगता है कि नियम 22 की अनदेखी की गई है। **आदेश**. 41, **नियम**. 22 के लिए आवश्यक है कि सुनवाई के लिए एक दिन तय किया जाना चाहिए और भले ही हम O. 41-A को इसे अनावश्यक बनाने के रूप में समझ सकते हैं, लेकिन **वादकर्ताओं** का मार्गदर्शन करने के लिए कुछ नियम होना चाहिए कि **आदेश**. 41,**नियम**. 22 का पालन कैसे किया जाना चाहिए।यह कहने का कोई नियम नहीं है कि उपस्थिति के लिए निर्धारित दिन को धारा 41, आर. 22, सिविल पी. सी. के अर्थ के भीतर सुनवाई के लिए निधारित दिन माना जाएगा।

इसलिए, मेरी स्पष्ट रूप से राय है कि 12 नवंबर, 1980 को आपत्तियां दायर करने के समय तक "अपील की सुनवाई के लिए निर्धारित तिथि" के बारे में विरोध करने वालों को कोई नोटिस नहीं दिया गया था और इस प्रकार उक्त आपत्तियों को सीमित रूप से प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है।यह विवाद में नहीं है कि एक प्रतिवादी अपने खिलाफ अपील स्वीकार किए जाने के साथ ही प्रति-आपत्ति दायर करने का अधिकार प्राप्त कर लेता है और अदालत नोटिस जारी करने का निर्देश देती है।

(5) **उपर दर्ज निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए पक्षकारों के विद्वान वकील** इस बात पर सहमत हैं कि इन परस्पर विरोध के गुण पूरी तरह से संबंधित मामले में मेरे पहले के निर्णय, यानी (भारत संघ बनाम सरदार सिंह, आदि) द्वारा कवर किए गए हैं।प्रश्न (5) और इस बात को ध्यान में रखते हुए कि इन्हें समान शर्तों में अनुमति दी जानी चाहिए।मैं उसी के अनुसार आदेश देता हूँ।

(6) 1980 का आर. एफ. ए. 148 24 नवंबर, 1980 को तय किया गया।

एन. के. एस.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा।

अनुवादक : अनिल कुमार